स्वतंत्रता और स्वच्छंदता

स्वतंत्र शब्द का अर्थ है स्व (आत्मा) + तन्त्र (राज्य) अर्थात् आत्मा का शरीर और कर्मेन्द्रियों पर राज्य। अपने आप पर राज्य करने वाला ही पूर्ण स्वतंत्र है। इसकी भेंट में स्वच्छंद शब्द का अर्थ है स्व (आत्मा) पर इच्छाओं का राज्य। इच्छाओं, तृष्णाओं द्वारा आदेशित व्यक्ति वास्तव में परतंत्र होता है। वह कहता तो यह है कि मैं किसी की क्यों मानूँ, किसी से दबकर क्यों रहूँ, मैं तो अपनी इच्छा का मालिक हूँ परन्तु वास्तव में तो इच्छाएँ उसकी मालिक होती हैं और वह इच्छाओं से दबा रहता है। वह कहता है, मैं तो मर्ज़ी का मालिक हूँ परन्तु वास्तव में मर्ज़ी ही उसकी मालिक बन जाती है और वह दास। इस दासता में वह अपने वरिष्ठजनों की अर्ज़ी या ईश्वर की अर्ज़ी पर भी ध्यान नहीं देता और दासता की गहरी से गहरी ज़ंजीरों में बंध जाता है। ऐसे स्वेच्छाचारी को हम मनचला भी कह सकते हैं, जो मन के कहे अनुसार चलता है और ईश्वर क्या कह रहा है उस पर कोई कान नहीं धरता।

गलत तरीके से सही परिणाम कैसे मिले?

आज भारत देश स्वतंत्र है। हर नागरिक को मौलिक अधिकार प्राप्त हैं परन्तु जीवन का जो मूल स्वरूप है, मूल आत्मिक सुख है उस पर से उसका अधिकार छूट गया है। आत्मा मूल स्वरूप में स्वतंत्र है, वह स्वतंत्र रूप में इस सृष्टि पर कर्म करने आती है और कार्य पूरा कर स्वतंत्र रूप से इस सृष्टि से जा सकती है। परन्तु जैसे ही आत्मा दैहिक आवरण को ओढ़ती है, अपने इस मूल स्वरूप को भूल जाती है और हदों में बंधी देह के साथ अपने को एकाकार करके अपने को भी अनेक हदों में बाँध लेती है। ये हदें उसे दुखी करती हैं। इस दुख से मुक्त होने का सही तरीका तो यह है कि वह देह से न्यारी होने का अहसास करे पर जब इस सही मार्ग का ज्ञान और तरीका नहीं मिलता तो वह कई बार स्वच्छंदता का मार्ग अपनाकर स्वतंत्रता का अनुभव करना चाहती है पर तरीका ही गलत हो तो सही परिणाम कैसे मिले?

तड़प रही है मानवता

स्वतंत्रता का अर्थ है, व्यक्ति विकारों, पापकर्मों, व्यसनों से मुक्त हो। परन्तु कई लोग विकारों, पापों और व्यसनों में बेरोकटोक डूबे रहने की स्वच्छंदता को स्वतंत्रता मानते हैं। इसी स्वच्छंदता का परिणाम है अनेक प्रकार के रोग, शोक, अकालमृत्यु, अशान्ति, बढ़ती महंगाई, भूखमरी, लड़ाई-झगड़ा, हिंसा, मतभेद आदि। आजकल समाज में एड्स का शोर है। यह बीमारी परिणाम है अनियंत्रित, स्वच्छंद काम-भोग की। इस बीमारी के अलावा और भी बहुत से भयंकर परिणाम इस स्वच्छंदता के निकल रहे हैं। नारी सहधर्मिणी के बजाय सह-पापिनी बना दी गई है। जब तक जिए, पुरुष की वासना-तृप्ति के पाप-गर्त में धंसी रहे। गृहस्थ की चारदीवारी फाँदकर यह काम की स्वच्छंदता जहाँ-तहाँ सेंध लगा रही है। काम की कुलालसा और स्वच्छंदता ने चाचा-भतीजी, मामा-भानजी और भाई-बहन के रिश्तों पर भी कालिमा की परत चढ़ा दी है। उम्र का लिहाज़, रिश्ते का लिहाज़ सब स्वच्छंद कामाचार की बाढ़ में बह रहे हैं। एटम

और हाइड्रोजन बम से भी भयंकर है यह स्वेच्छाचारी काम की हिंसा। वे तो कभी-कभार ही फटते हैं और कहीं-कहीं ही फटते हैं पर काम-वासना का विस्फोट तो हर समय, हर स्थान पर होता रहता है। उस विस्फोट में तो बिना तड़पे प्राण-पखेरू उड़ जाते हैं पर काम के विस्फोट में तड़प रही है अधमरी मानवता।

इतने भयंकर परिणामों को देखते हुए सरकार, सामाजिक संस्थाएँ, धार्मिक जन – सभी के द्वारा यह प्रचार होना चाहिए कि काम-भोग पतन का मार्ग है, इससे बचो, संयमी बनो। स्वयं के मन-बुद्धि की लगाम थाम सच्चे अर्थों में स्वतंत्र बनो पर हो रहा है उलटा। एड्स विरोधी नारे, एड्स का प्रचार करते नज़र आ रहे हैं। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि जब कहा जाता है 'चाय ना पीओ' या 'चाय पीओ' तो दोनों ही स्थितियों में 'चाय' तो बुद्धि रूपी नेत्र के सामने आती ही है। इसके स्थान पर यदि 'दूध पिओ' यह प्रचार किया जाये तो ही चाय का विस्मरण हो सकता है। अत: एड्स को समाप्त करने के लिए भी संयम, नियम, पवित्रता, मर्यादा, इन्द्रिय निग्रह, आत्म-नियंत्रण, स्व-राज्य, श्रेष्ठ दृष्टि, श्रेष्ठ वृत्ति, श्रेष्ठ कृति, दैवी विधान, ईश्वरीय ज्ञान, सहज राजयोग, मन-बुद्धि का सशक्तिकरण आदि बातों का प्रचार होना चाहिए पर यह प्रचार करना तो पुरातनपंथी बनना लगता है और एड्स को केन्द्र में रखकर, एड्स विरोधी अभियान, मनोवैज्ञानिक रूप से एड्स का प्रचार करता नज़र आ रहा है। स्वच्छंदता कहती है, मर्यादाओं की बात करना, संयम का उपदेश देना मानव के सुख पर आक्रमण है। पर ठण्डे विवेक से सोचिये, किसी को काम से रंगे नेत्रों से घूरना कितना बड़ा आक्रमण है, अश्लील पोस्टरों पर नज़रें गड़ा-गड़ा कर काम के ज़हर को पीते रहना आत्मा पर भयंकर आक्रमण है, कीमती शारीरिक शक्ति को काम के नाले में बहाकर भरी जवानी में रोग और बुढ़ापे से हाथ मिलाना अपने शरीर पर आक्रमण है, गुप्त रोगों के इलाज के लिए तथाकथित हकीमों के चक्कर लगाना अपने समय, शक्ति और धन पर आक्रमण है, किसी की इज़्ज़त को तार-तार करने की फ़िराक में रहना अपनी सुख-शान्ति पर आक्रमण है। स्वच्छंता का अर्थ ही है विकारों के आक्रमण का प्रतिरोध करने के बजाय उनके आगे समर्पण कर देना अथवा आक्रमण में सहयोग देना।

परतंत्र है चंचल मन वाला

स्वेच्छाचार और सदाचार – दोनों विरोधी हैं एक-दूसरे के। कई नौजवान कहते हैं, हमें माँ-बाप की अधीनता नहीं चाहिए। विद्यार्थी कहते हैं, शिक्षक का अनुशासन नहीं चाहिए। मीडिया कहता है, मुझे भी नीतिगत अंकुश नहीं चाहिए। राजनैतिक नेता विधानसभाओं और संसद में स्वेच्छाचारी आचरण करके जनता को गलत संदेश देते हैं, गुमराह करते हैं। कई आध्यात्मिक जन भी अध्यात्म के नियमों के अंकुश में नहीं रहना चाहते। सोचते हैं, जब चाहें उठें, जो चाहें बोलें, मनचाहा खाएँ, चाहे जहाँ जाएँ – यह आत्म-कल्याण नहीं, आत्म-पतन है। यह बुद्धिमानी नहीं, मूर्खता है। अखाद्य खाने वाले को स्वतंत्रता कहाँ? वह तो जड़ पदार्थों के अधीन है। जिसका मन चंचल है, वह परतंत्र है। जैसे भूखा जानवर कूड़े के ढेरों को कुरेदता रहता है, ऐसे ही इच्छाओं की भूख मिटाने के लिए वह असंयमी, दुराचारी और स्वेच्छाचारी मनुष्य भी काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के कूड़े को कुरेदता है, उसमें मुँह मारता है और इन्हीं विकारों की लालसा में भटकता है।

सच्ची स्वतंत्रता देती है आत्मिक सुख

स्वच्छंदता मनुष्य को बाह्य भोगों और सुविधाओं का बंदी बनाती है परन्तु स्वतंत्रता आंतरिक दैवी सुख का रसपान कराती है। स्वच्छंदता मानव तथा प्रकृति का शोषण सिखाती है, स्वतंत्रता दोनों का पोषण सिखाती है। स्वेच्छाचारी आहार, निद्रा, भय और मैथुन इन पशु प्रवृत्तियों के अधीन रहता है और स्वतंत्र व्यक्ति इन सबसे ऊपर उठकर आत्मिक और ईश्वरीय सुख का अनुभव करता है, इसे ही अध्यात्म कहा गया है।

अध्यात्म कहता है, भगवान को सब सौंप दो तो पूर्ण स्वतंत्र होंगे। विकारों, बुराइयों, व्यर्थ से स्वतंत्र होंगे। यही सच्ची स्वतंत्रता है। दिव्य जीवन जीने के लिए जो ज़रूरी है, वह सब करो लेकिन निमित्त बनकर, भगवान को बीच में रखकर, अपने को ट्रस्टी समझकर, ईश्वरीय श्रीमत की लकीर के अन्दर रहकर करो। ईश्वरीय नियम स्वतंत्रता के बाधक नहीं, सहयोगी हैं। मन को मुक्ति की चरम सीमा तक पहुँचाने के लिए हैं। तो आइये, इस स्वतंत्रता दिवस पर ऐसी सच्ची, समग्र, शाश्वत स्वतंत्रता का अनुभव करने का दृढ़ संकल्प लें।